बादशाह और मैं!!!!!

पोएली सेनगुप्ता

मुझे आज भी याद है। जब मेरी मुलाकात बादशाह हुमायूँ से हुई थी उस दिन गणित का पर्चा था। बल्कि यूँ कहिए कि उस दिन अगर गणित का पर्चा न होता तो मैं हुमायूँ से मिल ही नहीं पाता। हुआ यूँ कि मैंने हुमायूँ के मकबरे के चारों ओर की सुबह की दौड़ पूरी कर ली थी। और अभी भी स्कूल बस आने में पौन घण्टा बचा था। यानी नहाने, कपड़े पहनने और नाश्ते के बाद आराम से बस पकड़ी जा सकती थी। और काफी गुंजाइश किताबें पलट लेने की भी थी। पर मैं पढ़ना नहीं चाहता था। गणित तो कतई नहीं। और फिर इस दिन तो बिल्कुल नहीं... जब चमकीला, बेहद खूबसूरत दिन जी भर के खुला हो। एक दिन जो बस धूप सेंकने के लिए आया है या आराम से बैठकर शतरंज की चालें गुनने के लिए, सहगल को सुनने के लिए या यूँ ही ...

"होशियार!" किसी ने कहा। एक बिल्कुल अलग जुबान में। न, वो हिन्दी तो नहीं थी। पक्के तौर पर। हाँ, उर्दू से ज़रा मिलती-जुलती थी। फिल्मी गानों जैसी उर्दू। मैंने सिर उठाया। वहाँ एक दाढ़ी वाले बुज़ुर्गवार थे। उनकी आँखों में एक अजब-सी गहराई थी।

"लगता है तुम कुछ बेमज़ा शय[1] के बारे में सोच रहे हो?" मुझे खुद आश्चर्य होता है कि कैसे मैंने उनकी बात को समझा और फिर उसे उन्हीं को लौटाते हुए दोहराया – बेमज़ा?

उन्होंने गहरी साँस खींचते हुए कहा, "हाँ, ज़िन्दगी बेमज़ा, नागवार[2] चीज़ों से ही तो भरी है। मुझे याद है जब ....।" वे रो पड़े और कहा, "किस तरफ से हमला हुआ है? पूर्व से या कि उत्तर से?"

मैं याद करने की कोशिश करने लगा कि स्कूल किस तरफ पड़ता है। पूर्व की तरफ या कि ज़रा-सा दक्षिण-पूर्व की तरफ? अगर कम्पास होता तो फटाक से पता कर लेता। "रहने दो! जानना हमेशा से मुश्किल रहा है। इतनी अफवाहें, इतने शक, शुबहा[3], बेएतबारी[4]। वे हमें सचमुच खुशी महसूस करने का वक्त भी नहीं देते, कि बस यूँ ही..."

"...मज़े करो।" मैंने कहा और फिर मुझे अजीब लगा कि कैसे मैं उस अजनबी ज़बान में बोल पाया। "शतरंज खेलो, सहगल को सुनो..."

"सैगल? क्या यह नया गायक है? अच्छा गाता है?" उन्होंने पूछा।

"हाँ, कमाल का गाता है।" मैंने जवाब दिया।

"चलो तो हम भी कभी उसे सुनेंगे।" उन्होंने आहिस्ता से कहा। "जब वक्त मिलेगा। पर वक्त तो हमेशा ही कम पड़ता है। चाहे उत्तर से आए अफगान हों या पश्चिम के राजपूत। और फिर वहाँ गुजरात के बहादुर शाह भी हैं और वो सबसे खतरनाक शेरशाह सूरी....।"

वह बुज़ुर्ग फिर इमारत की सीढ़ियों पर बैठ गए। चेहरा अपनी हथेलियों से ढँककर। उस वक्त पहली बार मुझे खुशी हुई कि मैं स्कूल गया और पिछली शाम का काम पूरा किया। उसी से मैंने जाना उस अफगानी शेरशाह के बारे में जिसने मुगल बागशाह को हराकर भटकता फकीर बना दिया। ओहो तो ये बादशाह हुमायूँ थे! मैंने उन्हें ठीक से देखा। वे बहुत बुजुर्ग तो नहीं दिखते थे पर उनके कुछ बाल सफेद हो गए थे।

उनके शरीर का बाकी हिस्सा एक किस्म के रेशमी कपड़े से इस कदर ढँका था कि उनके हाथ-पैरों का पता ही नहीं चलता था। हाँ, पर मैं उनके हाथ ज़रूर देख पाया। अँगूठियों से भरी उनकी लम्बी-लम्बी उँगलियाँ मुझे दिखीं। मैं उनकी बगल में बैठ गया। और कहा, "कोई बात नहीं! ज़रा देखिए तो क्या सुहाना दिन है... लग तो ऐसा रहा है कि कल बारिश होगी।"

उन्होंने सिर उठाया और मुस्कुरा कर बोले, "हाँ, तुम ठीक कहते हो। कल का कल जाने...।" वह उठे और चल दिए। यही कहते हुए, "कल का कल जाने।"

बहुत देर हो चुकी थी। मैं घर की ओर भागा। नहाया, कपड़े पहने, नाश्ता गड़प किया और किसी तरह स्कूल बस पकड़ ही ली।

मेरा गणित का पर्चा बेहद बुरा गया। "कितनी बार कहा है... कितनी बार मैंने तुमसे कहा है कि इम्तिहानों के वक्त थोड़ा पढ़ लिया करो। ज़रा-सी मेहनत कर लो तो अच्छे-खासे नम्बर ला सकते हो। खुद ही अपने सबसे बड़े दुश्मन हो।"

शय[1] - चीज़, नागवार[2] - अप्रिय, शुबहा[3] - भ्रम, बेएतबारी[4] - अविश्वास

मैं चुप्प रहा। कहता भी क्या? वो ठीक ही कह रही थीं। अगर मैं चाहूँ तो ज़्यादातर मामलों में मैं अच्छा कर सकता हूँ। चाहूँ तो कक्षा में पहले नम्बर पर भी आ सकता हूँ। पर चाहूँ और करूँ तब न? यही तो चक्कर था। माँ की समझाइशें चल रही थीं और मैं बादशाह हुमायूँ के बारे में सोच रहा था। क्या सैर के वक्त कल भी मैं उनसे मिल पाऊँगा? मन कह रहा था – ज़रूर मिलूँगा।

वे वहीं बैठे थे। बालकनी में। उनकी निगाहें वहाँ थी जहाँ अब सूखी नदी थी। मुझे आता देख उन्होंने हाथ हिलाया। मैंने महसूस किया कि क्या रौबीला अन्दाज़ था उनका, एकदम शहंशाहाना। मन में आया कि झुककर सलाम करूँ। पर जानता था कि ठीक से कर नहीं पाऊँगा, इसलिए नहीं किया।

"इसे देखो!" उस तरफ इशारा करते हुए वे बोले जहाँ कभी नदी बहती थी। "सूखी नदी। इस बार भी बारिश ने गच्चा दे दिया। अब मेरे लोग क्या करेंगे?" फिर वे मुस्कुराए और बोले, "... चलो कुछ खुशगवार बातें करें। क्यों सोचें दुखों को, और पत्तों की तरह झड़ते दिनों के बारे में? कल शायद बारिश हो। तुम यही तो कह रहे थे न? चलो बातें करें उसकी... क्या नाम बताया था तुमने ....सैगल? क्या वो बहुत मशहूर है?"

मैंने हकलाते हुए कहा, "बहुत पहले हुआ करते थे सहगल।"

"तब तो यकीनन वो दर्द भरे नग्मे गाते होंगे।" बादशाह ने आह भरी और दुबारा उनके चेहरे पर दुख झलकने लगा था। "सारे पुराने गीत दर्दों-दुखों से भरे हुआ करते थे। वो शायर जानते थे, दुख क्या होता है! गर्दिशें[5]!" वे बोले।

"पर आप तो बादशाह हैं। ज़िन्दगी आप के लिए तो दर्दों से भरी नहीं हो सकती।" मैं एकदम से बोल उठा।

वे कुछ पल चुप रहे। फिर अँगूठियों से भारी अपना हाथ मेरे हाथों पर रखकर बोले, "बेटे, शुक्र करो कि तुम बादशाह नहीं हुए। बादशाह होना बदनसीबी है। अगर मैं तुम जैसा जवान और बेपरवाह होता तो क्या नहीं कर सकता था! मैं क्या नहीं हासिल कर सकता था!"

बदनसीब से मुझे गणित के पर्चे की याद हो आई। सोचने लगा कि क्या मैं भी बदनसीब नहीं। इनकी तरह नहीं, फिर भी बदनसीब तो हूँ ही। उनका हाथ अब भी मेरे हाथों पर था। और उनके हाथों की गरमाहट मुझे महसूस हो रही थी। वे फिर बोले, "बादशाह तो सुकून से सो भी नहीं सकता। उसको हर वक्त दुश्मनों की चिन्ता खाए रहती है। हर ओर फैले दुश्मनों की ....। उन दुश्मनों की भी जो उसके सबसे अज़ीज़[6] हैं।"

उनकी ज़बान लड़खड़ा गई थी। वे बस किसी तरह अपने आँसुओं को रोके हुए थे। पता नहीं कैसे मैंने अचानक कह डाला, "आप जानते हैं, आप खुद ही अपने सबसे बड़े दुश्मन हैं।"

बोलने के बाद मुझे लगा कि मुझे ऐसा नहीं कहना चाहिए था। कितनी गन्दी तरह कहा मैंने। जैसे उनकी गलती निकाल रहा हूँ। उन्होंने झट से अपना हाथ खींच लिया। और पलटकर मुझे घूरने लगे। मैंने कुछ कहना चाहा पर शब्द सूझ ही नहीं रहे थे। मैं बना, पूरी तरह से हिला हुआ।

फिर मैं उस बादशाह को कभी नहीं देख सका। अगले ही दिन इतिहास के पीरियड में मुझे हुमायूँ की हिम्मत और दमखम के बारे में पता चला। पता चला कि कैसे हुमायूँ ने फारसी शासकों की मदद से अफगानिस्तान की पहाड़ियों को पार किया और दिल्ली और आगरे को फतह किया। और किस तरह हुमायूँ ने शानदार मुगल साम्राज्य की नींव डाली।

मैं आज सोचता हूँ कि इस तरह क्या मैं भी....?

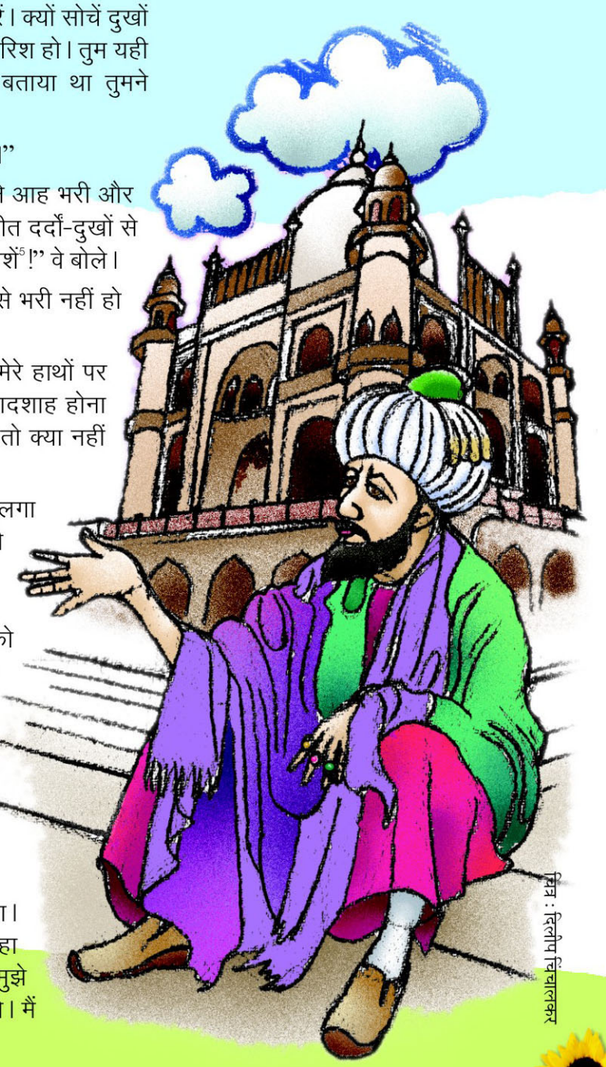

चित्र : दिलीप चिंचालकर

गर्दिशें[5] - मुश्किलें, अज़ीज़[6] - प्रिय